|| श्रीहरिः ||
वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 14: गुणत्रयविभागयोग

2/2 (श्लोक 11-27), रविवार, 05 मई 2024

विवेचक: गीता विशारद डॉ आशू जी गोयल

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/6ieXTvdXRHA

गुणत्रय की परिधि में मनुष्य की जीवन यात्रा

हरि नाम सङ्कीर्तन, प्रारम्भिक प्रार्थना और दीप प्रज्वलन, ईश्वर और सद्गुरूदेव की प्रार्थना के साथ सत्र आरम्भ हुआ। भगवान की अतिशय मङ्गलमय कृपा हम पर बरस रही है कि हम अपने जीवन को सार्थक करने के लिए, उसको पूर्णता तक पहुँचाने के लिए भगवद्गीताजी के चिन्तन, मनन, स्वाध्याय के द्वारा उसके सूत्रों को अपने जीवन में उतारने में लग गए हैं। विवेचन में भी हमको रस आ रहा है। इसका अर्थ है कि गीताजी अब हमारे जीवन में घुलने लगी है। यह सब भगवान की कृपा से हुआ है। भगवान ने हमको चुना है तभी हम गीता जी को पढ़ रहे हैं। अब हम गीताजी में लग गए तो हमारा इस जन्म में या आने वाले किसी जीवन में नाश नहीं हो सकता। हम दुर्गति को प्राप्त नहीं हो सकते, यह निश्चित है।

भगवान कहते हैं **"न मे भक्त प्रणश्यति"**- मेरे भक्त का नाश ही नहीं होता।

भगवान कहते हैं कि तुम इस जन्म में मुझ तक पहुँचो या आगे और कितने भी जन्म लो पर यदि गीताजी में लग गए तो मुझको ही प्राप्त होंगे। यह बात भगवान ने गीता के अट्ठारहवें अध्याय के छियासठवें श्लोक में कही है -

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।

इस जन्म में गीताजी की जो रस्सी हमने पकड़ी है वह हमसे कभी नहीं छूटनी चाहिए। हमारे सामने जो अवसर आया है उसे भगवान ही हमसे करवा रहे हैं। वे ही हमारे भीतर बैठकर हमें प्रेरणा दे रहे हैं। हम तो निमित्त मात्र हैं।

अध्याय चौदह के पूर्वार्ध में हमने देखा कि हनुमानजी महाराज त्रयीगुणों का किस प्रकार उल्लङ्घन कर गुणातीत बन सके। तीनों गुण किस प्रकार कार्य करते हैं। कैसे व्यक्ति तीनों गुणों का उल्लङ्घन करके गुणातीत बन सकता है। उसके लक्षण कैसे हैं। यह सब भगवान ने बताया।

भगवान कहते हैं कि आकर्षण, नाम-रूप की भिन्नता के कारण तीनों गुणों का प्रभाव अलग-अलग होता है। जैसे किसी को मीठा अच्छा लगता है, किसी को तीखा अच्छा लगता है और किसी को खट्टा अच्छा लगता है इसका मौलिक कारण सत्त्व, रज और तम तीनों गुणों की मात्राओं में अन्तर है।

जिसका सत्त्व गुण बढ़ा होता है उसको मीठा अच्छा लगता है जिसका रजोगुण बढ़ा होता है उसको तीखा अच्छा लगता है और

जिसका तमोगुण बढ़ा होता है उसको खट्टा ज्यादा अच्छा लगता है।

यदि अलग-अलग महिलाएँ एक ही प्रकार के आटे, आलू और मसाले से भोजन बनाएँ तो सभी के बनाने का ढङ्ग अलग-अलग होने के कारण भोजन अलग-अलग स्वाद का बनेगा। पदार्थ सबका समान है परन्तु तीनों गुणों के अलग-अलग योग से स्वाद भिन्न हो जाते हैं। वैसे ही सत्त्व, रजस, तमस गुणों की अलग-अलग मात्राओं के योग से अलग-अलग वृत्तियाँ बनती हैं।

सत्, रज, तम तीनों गुणों को कभी भी समाप्त नहीं किया जा सकता। इनकी मात्राओं को घटा-बढ़ा सकते हैं। ऐसा नहीं है कि एक बार बढ़ गया तो बढ़ा ही रहेगा या घट गया तो घटा ही रहेगा। पूरे दिनभर हमारे सत्, रज, तम तीनों गुणों में बदलाव होता रहता है।

जब हम विवेचन सुनते हैं तब हम सत्त्व गुण में होते हैं, परन्तु सुनते-सुनते नींद आ गई तो हम तमोगुण में आ गए और सुनते-सुनते हिल रहे हैं, यहाँ- वहाँ देख रहे हैं, इधर-उधर भटक रहे हैं यह रजोगुण है। पूरे दिन में हमारे विचार कभी सात्त्विक होते हैं, कभी राजसिक और कभी तामसिक होते हैं, बुरे होते हैं।

कैसे पता लगे हम किस समय किस गुण में हैं? इसके लिए भगवान नौ गुणों के बारे में बताते हैं।

14.11

सर्वद्वारेषु देहेऽस्मिन्, प्रकाश उपजायते।
ज्ञानं(म्) यदा तदा विद्याद्, विवृद्धं(म्) सत्त्वमित्युत॥14.11॥

जब इस मनुष्यशरीर में सब द्वारों (इन्द्रियों और अन्तःकरण) में प्रकाश (स्वच्छता) और ज्ञान (विवेक) प्रकट हो जाता है, तब जानना चाहिये कि सत्त्वगुण बढ़ा हुआ है।

विवेचनः भगवान कहते हैं कि अर्जुन जिस समय देह, अन्तःकरण और इन्द्रियों में चेतनता और विवेक शक्ति उत्पन्न होती है उस समय सत्त्व गुण की वृद्धि होती है।

भगवान ने नवें अध्याय में **नवद्वारे पुरे देहि** की बात कही है - पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, चार अन्तःकरण चतुष्टय। इन नौ द्वारों के द्वारा ही सारे विषयों का रस लिया जाता है। कानों से क्या सुनना है, आँखों से क्या देखना है, नासिका से क्या गन्ध ग्रहण करनी है, भूख में क्या खाना है, क्या स्पर्श करना है, मन से क्या विचार करना है, बुद्धि से क्या सङ्कल्प लेना है, क्या निर्णय लेना है, चित्त में कैसी धारणा करनी है और स्व की अनुभूति कैसे करनी है - इन नवद्वारों की स्पष्टता के द्वारा ही स्पष्ट होता है कि हमें क्या करना है।

भगवान कहते हैं कि जिसके देह, अन्तःकरण और इन्द्रियों में चेतनता उत्पन्न हो गई, उसका विवेक स्पष्ट है।

What to do and what not to do, Dos and don'ts का भाव जितना अधिक स्पष्ट होगा सत्त्व गुण उतना अधिक होगा। सतगुणी व्यक्ति दूसरों को स्पष्टता देता है। सारे सन्त महात्मा इसी गुण से भरे होते हैं।

प्रकाश का अर्थ है सही देखना।

ज्ञान का अर्थ है सही बात को चुनना।

प्रायः ऐसा होता है, हम कहते हैं कि उस समय हमारी बुद्धि में बात नहीं आई, समझ नहीं आया और हमने कुछ भी काम बिना सोचे-समझे कर लिया। बाद में समझ में आया कि वह गलत था और पछताते हैं।

एक व्यक्ति का पर्स खो गया जिसमें आवश्यक प्रलेख थे। उसने हजार रुपए के इनाम की घोषणा कर दी। एक ईमानदार बालक ने उसे फोन करके बताया कि आपका पर्स मिला है और आपने देने वाले को हजार रुपए के ईनाम की घोषणा की है। वह बालक बताए पते पर पर्स लेकर पहुँच गया। व्यक्ति को जब पर्स मिल गया तो उसे लालच आ गया कि मैं अपने हजार रुपए

क्यों दूँ। इस पर उसने कहा कि मेरे इस पर्स में ग्यारह सौ रुपये थे परन्तु अब इसमें केवल हजार रुपए हैं, तुमने मेरे सौ रुपये चुरा लिए। इस बात पर दोनों में झगड़ा हो गया। एक साधु महाराज वहाँ से निकल रहे थे। निर्णय हुआ कि साधु से पूछते हैं। वे जो कहेंगे हम दोनों मान लेंगे। साधु ने पर्स हाथ में लिया और दोनों की बात सुनकर कहा कि दोनों मेरी आँखों में देखकर सच बोलो। साधु का सत्त्व गुण बढ़ा हुआ था। साधु ने कहा-शपथपूर्वक कहो कि मेरे पर्स में ग्यारह सौ रुपये थे। व्यक्ति ने शपथपूर्वक कहा कि मेरे पास ग्यारह सौ रुपए थे। साधु ने बालक से कहा तुम भी शपथपूर्वक कहो कि तुमने रुपए नहीं चुराए। बालक ने कहा कि मैंने सौ रुपये नहीं चुराये। इस पर साधु ने कहा कि मैं दोनों की बात मानता हूँ। यह पर्स इस व्यक्ति का नहीं है क्योंकि इसमें तो हजार रुपये हैं और इसके पर्स में तो ग्यारह सौ रुपये थे, साथ ही इस बालक ने सौ रुपये भी नहीं चुराये है, अतः अब यह पर्स मन्दिर को दान में जाएगा। यह सुनकर व्यक्ति बोला महाराज चाहे तो दो हजार रुपये ले लो पर मेरा पर्स मुझे वापस कर दो। मैं बहुत लज्जित हूँ और क्षमा चाहता हूँ। सत्त्वगुण से व्यक्ति के मन में अधिक स्पष्टता आ जाती है।

अगले श्लोक में भगवान रजोगुण के लक्षण बताते हुए कहते हैं -

14.12

लोभः(फ्) प्रवृत्तिरारम्भः(ख्), कर्मणामशमः(स्) स्पृहा।
रजस्येतानि जायन्ते, विवृद्धे भरतर्षभ॥14.12॥

हे भरतवंशमें श्रेष्ठ अर्जुन ! रजोगुण के बढ़ने पर लोभ, प्रवृत्ति, कर्मोंका आरम्भ, अशान्ति और स्पृहा -- ये वृत्तियाँ पैदा होती हैं।

विवेचनः भगवान कहते हैं, रजोगुण की वृद्धि होने पर व्यक्ति के मन में लोभ, स्वार्थ, बुद्धि से कर्म करने का भाव, लाभ के लिए काम करने की भावना और अशान्ति, स्पृह, विषय भोग की लालसा से चिपकना, की प्रवृत्ति बढ़ती जाती है।

गोस्वामी तुलसीदास जी कहते हैं-

जिमि प्रतिलाभ लोभ अधिकाई॥

जिस व्यक्ति के पास जितना अधिक धन बढ़ता जाता है उतना ही उसका लोभ बढ़ जाता है। जब धन कम था वह सहजता से अपनी वस्तु और धन दूसरों को दे देता था, दान कर देता था। धन बढ़ने पर कृपण हो गया। उसका लोभ बढ़ गया। मेरी हैसियत जब कम थी तो आसानी से अपनी साइकिल शेयर कर देता था पर हैसियत बढ़ने पर अब अपनी कार में लिफ्ट भी नहीं देना चाहता।

रजोगुण की प्रवृत्ति बढ़ने पर लोभ बढ़ता है, कुछ करते रहने की प्रवृत्ति बढ़ती है, हमेशा कुछ न कुछ करते रहने की आदत लग जाती है। दूसरों की उलझनों में फँसते हैं, बिना मतलब के काम करते रहते हैं।

भगवान कहते हैं, सकाम भाव से कर्मों को करने की आदत लग जाती है। मन में भाव रहता है कि पैसा अधिक हो गया शेयर खरीद लेता हूँ, सोना या जमीन खरीद लेता हूँ। सकाम कर्म की भावना बढ़ती है। सकाम उपासना की वृत्ति बढ़ती है कि शिवजी को जलाभिषेक कर देता हूँ मुझे और धन दे देंगे। भगवान कहते हैं, जितना रजोगुण बढ़ेगा उतनी शान्ति चली जाएगी। व्यक्ति के मन में चञ्चलता बढ़ जाती है। व्यक्ति के मन की चञ्चलता और अशान्ति का उसकी आँखों के द्वारा पता लगाया जा सकता है। शान्ति कम होने पर पर मन व आँखें चञ्चल हो जाती हैं। यहाँ- वहाँ दूसरों के बारे में देखता व सोचता रहता है।

अब भगवान कहते हैं कि साथ-साथ स्पृह बढ़ जाती है अर्थात् वासना बढ़ने पर भोग में चिपकना। जहाँ गए दूसरे का कुछ अच्छा देखा तो अपने को भी वैसा ही चाहिए। मन उसी चीज में चिपक गया, इन्द्रिय वही चिपक कर रह गईं। मन भोगों में चिपक जाता है। उसका चिन्तन करता रहता है और उसी का रस लेता रहता है।

14.13

अप्रकाशोऽप्रवृत्तिश्च, प्रमादो मोह एव च।
तमस्येतानि जायन्ते, विवृद्धे कुरुनन्दन॥14.13॥

हे कुरुनन्दन! तमोगुण के बढ़ने पर अप्रकाश, अप्रवृत्ति तथा प्रमाद और मोह – ये वृत्तियाँ भी पैदा होती हैं।

विवेचनः भगवान कहते हैं कि तमोगुण के बढ़ने पर अन्तःकरण, इन्द्रियों में-
अप्रकाश- कर्त्तव्य करने की अप्रवृति, प्रमाद अर्थात् अचेष्टा और मोह, मूढ़ता वृत्तियाँ बढ़ जाती हैं।

सतोगुण को उल्टा कर दो तो तमोगुण है। भगवान कहते हैं कि अप्रकाश में मनुष्य सब उल्टा देखता है। लोग जिसे मना करेंगे वही कार्य करेगा, सदैव भ्रमित रहता है। उसके भले की बात करो तो झगड़ा करता है।अपने निर्णय पर हठ करता है।

अप्रवृति- कोई भी काम करना हो उसको टाल देगा, करना ही नहीं होता है बाद में करेंगे, कल करेंगे। किसी तरह से मैं काम करने से बच जाऊँ। कोई दूसरा कर ही देगा यह अप्रवृत्ति है।

प्रमाद- व्यक्ति आवश्यक कार्य भी नहीं करेगा, हमेशा फालतू काम करता है। अपेक्षित कर्मों के अतिरिक्त अन्य सभी कर्म करेगा।

मोह- अर्थात् मूढ़ता, अन्धकार में अपने हानि-लाभ का विवेक भी नहीं रहता है।

बचपन में पञ्चतन्त्र में बन्दर और मगरमच्छ की कहानी पढ़ी थी। बन्दर प्रतिदिन मगरमच्छ को जामुन खिलाता था। मगरमच्छ की पत्नी ने कहा कि बन्दर जामुन के वृक्ष पर रहता है उसका हृदय कितना अच्छा होगा। मुझे उसका हृदय खाना है। मगरमच्छ बन्दर से उसका हृदय देने के लिए कहता है। बन्दर कहता है तुम्हें पता नहीं है कि बन्दरों का हृदय बाहर होता है, मेरा हृदय तो वृक्ष पर रखा है। यहाँ मगरमच्छ मूढ़ है। प्रतिदिन अच्छा जामुन खाने को मिलता है। ऐसे में मित्र का हृदय कौन खाएगा। तमोगुणीं व्यक्ति ही ऐसा कर सकता है।

तमोगुण की प्रधानता है कि अपना लाभ करने वाले का नुकसान करता है। हमेशा आलस में पड़ा रहता है। उठने के बाद भी बिस्तर पर पड़े रहना तमोगुण है।

भगवान कहते हैं कि अर्जुन सतोगुण से जीवन में स्पष्टता आती है, रजोगुण से चञ्चलता आती है और तमोगुण से मोह व अन्धकार आता है।

तीनों गुणों का परिणाम क्या होता है यह भगवान आगे कहते हैं।

14.14

यदा सत्त्वे प्रवृद्धे तु, प्रलयं(म्) याति देहभृत्।
तदोत्तमविदां(म्) लोकान्, अमलान्प्रतिपद्यते॥14.14॥

जिस समय सत्त्वगुण बढ़ा हो, उस समय यदि देहधारी मनुष्य मर जाता है (तो वह) उत्तमवेत्ताओं के निर्मल लोकों में जाता है।

विवेचनः भगवान अर्जुन से कहते हैं कि सत्त्वगुण की वृद्धि में व्यक्ति जब मृत्यु को प्राप्त होता है तो स्वर्गादि उत्तम लोकों को प्राप्त होकर उत्तम कर्म करने वाला होता है।

अन्त:काल में हमारी वृत्ति कैसी होगी। सत्त्वगुण में स्वयं को लगाए रहने पर अन्त:काल में सत्त्वगुण की वृत्ति जागृत होती है।

जन्म-जन्म मुनि जतनु कराहीं अन्त राम कहि आवत नाहीं।

बड़े यत्न से पुरुषार्थ करके अपने जीवन को सतोगुणी बनाना है।

14.15

रजसि प्रलयं(ङ्) गत्वा, कर्मसङ्गिषु जायते।
तथा प्रलीनस्तमसि, मूढयोनिषु जायते॥14.15॥

रजोगुण के बढ़ने पर मरने वाला प्राणी कर्मसंगी मनुष्य योनि में जन्म लेता है तथा तमोगुण के बढ़ने पर मरने वाला मूढ़ योनियों में जन्म लेता है।

विवेचनः भगवान अर्जुन से कहते हैं कि रजोगुण की वृद्धि में मृत्यु होने के बाद मनुष्य को पुनः मनुष्य जन्म मिल जाता है। किसी मनुष्य का रजोगुण यदि सत्त्व गुण से मिला रहता है तो उसका कभी नाश नहीं होता। उसे फिर से मनुष्य जन्म मिल जाता है परन्तु तमोगुण की वृद्धि होने पर मृत्यु को प्राप्त होने वाले मनुष्य को कीट-पशु आदि मूढ़ योनियों की प्राप्ति होती है।

सत्त्वगुण की वृद्धि में मृत्यु होने पर स्वर्गादि उत्तम लोकों की प्राप्ति होती है।

रजोगुण की वृद्धि में मृत्यु को प्राप्त होने पर मनुष्य जन्म मिलता है ।

तमोगुण की वृद्धि पर मृत्यु होने पर मूढ़ योनि की प्राप्ति होती है।

14.16

कर्मणः(स्) सुकृतस्याहुः(स्), सात्त्विकं(न्) निर्मलं(म्) फलम्।
रजसस्तु फलं(न्) दुःखम्, अज्ञानं(न्) तमसः(फ्) फलम्॥14.16॥

विवेकी पुरुषों ने – शुभ कर्म का तो सात्त्विक निर्मल फल कहा है, राजस कर्म का फल दुःख (कहा है और) तामस कर्म का फल अज्ञान (मूढ़ता) कहा है।

विवेचनः भगवान तीनों कर्मों का फल बताते हुए कहते हैं कि श्रेष्ठ कर्म का फल सत्त्वगुण के द्वारा उत्तम ज्ञान की प्राप्ति है।

भगवान कहते हैं कि अर्जुन ये जो तीन प्रकार के कर्म हैं इनका फल भी उनके अनुसार ही होगा। भगवान अर्जुन से कहते हैं कि सत्त्व कर्म का फल ज्ञान, राजस कर्म का फल दुःख और तामस कर्म का फल अज्ञान है। जो व्यक्ति भीतर से प्रसन्न रहता है उसको प्रसन्न होने के लिए वस्तु, व्यक्ति की परिस्थिति का ध्यान विचार नहीं रहता है। सुख और दुःख की प्राप्ति के लिए ये तीनों ही बातें आवश्यक हैं। जो व्यक्ति वस्तु, व्यक्ति, परिस्थिति के संयोग-वियोग से सुख-दुःख अनुभव करता है वह रजोगुणी है और तमोगुणी व्यक्ति अपनी हर परिस्थिति के लिए, अपनी हर गलती के लिए, अपनी हर बुराई के लिए सदैव दूसरों को दोषी मानता है।

14.17

सत्त्वात्सञ्जायते ज्ञानं(म्), रजसो लोभ एव च।
प्रमादमोहौ तमसो, भवतोऽज्ञानमेव च॥14.17॥

सत्त्वगुण से ज्ञान और रजोगुण से लोभ (आदि) ही उत्पन्न होते हैं; तमोगुण से प्रमाद, मोह एवं अज्ञान भी उत्पन्न होते हैं।

विवेचनः भगवान कहते हैं कि सतोगुण से ज्ञान उत्पन्न होता है।

रजोगुण से लोभ उत्पन्न होता है।

तमोगुण से प्रमाद, मोह और अज्ञान उत्पन्न होता है।

14.18

ऊर्ध्वं(ङ्) गच्छन्ति सत्त्वस्था, मध्ये तिष्ठन्ति राजसाः।
जघन्यगुणवृत्तिस्था, अधो गच्छन्ति तामसाः॥14.18॥

सत्त्वगुण में स्थित मनुष्य ऊर्ध्वलोकों में जाते हैं, रजोगुण में स्थित मनुष्य मृत्युलोक में जन्म लेते हैं (और) निन्दनीय तमोगुण की वृत्ति में स्थित तामस मनुष्य अधोगति में जाते हैं।

विवेचनः भगवान पुनः बताते हुए कहते हैं कि सतोगुण में स्थित पुरुष को स्वर्ग आदि उत्तम लोकों की प्राप्ति होती है।

रजोगुण में स्थित पुरुष को मृत्युलोक की प्राप्ति होती है।

तमोगुण में स्थित पुरुष आलस, प्रमाद, निद्रा, मोह के कारण कीट, पशु आदि नीच योनियों को प्राप्त होता है।

14.19

नान्यं(ङ्) गुणेभ्यः(ख्) कर्तारं(म्), यदा द्रष्टानुपश्यति।
गुणेभ्यश्च परं(म्) वेत्ति, मद्भावं(म्) सोऽधिगच्छति॥14.19॥

जब विवेकी (विचार कुशल) मनुष्य तीनों गुणों के (सिवाय) अन्य किसी को कर्ता नहीं देखता और (अपने को) गुणों से पर अनुभव करता है, (तब) वह मेरे सत्स्वरूप को प्राप्त हो जाता है।

विवेचनः भगवान कहते हैं कि अर्जुन जिस समय दृष्टा तीनों गुणों से परे रहकर किसी को कर्त्ता नहीं मानता और तीनों गुणों से परे स्वयं को सच्चिदानन्द स्वरूप परमात्मा का अनुभव करता है उस समय वह मेरे स्वरूप को प्राप्त होता है।

हम ऐसा मानते हैं कि यदि हम सतोगुण में रहेंगे तो स्वर्ग आदि लोकों को प्राप्त होंगे। भगवान कुछ अलग बात बताते हुए कहते हैं कि अर्जुन! ऐसा नहीं है। अन्तिम स्थिति में सत्त्वगुण भी उपयोगी नहीं होता। दृष्टा को सतोगुण से अधिक से अधिक स्वर्गादि लोकों की प्राप्ति होगी, देवता बन जाओगे परन्तु जिस समय दृष्टा इन तीनों गुणों का उल्लङ्घन करके इससे आगे जाने की चेष्टा करता है, यह गुणातीत का लक्षण है। तमोगुण को दबाकर रजोगुण और रजोगुण को दबाकर सतोगुण प्राप्त किया जाता है परन्तु अन्तिम पायदान पर सतोगुण भी अभीष्ट नहीं है। जिस समय दृष्टा इन तीनों गुणों का उल्लङ्घन करके गुणातीत हो जाता है, वह मेरे स्वरूप को प्राप्त होता है।

14.20

गुणानेतानतीत्य त्रीन्, देही देहसमुद्भवान्।
जन्ममृत्युजरादुःखैः(र्), विमुक्तोऽमृतमश्नुते॥14.20॥

देहधारी (विवेकी मनुष्य) देह को उत्पन्न करने वाले इन तीनों गुणों का अतिक्रमण करके जन्म, मृत्यु और वृद्धावस्था रूप दुःखों से रहित हुआ अमरता का अनुभव करता है।

विवेचनः मनुष्य शरीर की उत्पत्ति के कारण तीनों गुणों का उल्लङ्घन करके जन्म-मृत्यु, जरा-व्याधि, सुख-दुःख से रहित होकर मनुष्य परमानन्द को प्राप्त हो जाता है।

अर्जुन को यह सुनकर बड़ा आश्चर्य होता है कि क्या ऐसा हो सकता है?

अगले श्लोक में वे भगवान से तीन प्रश्न पूछते हैं -

14.21

अर्जुन उवाच
कैर्लिंगैस्त्रीन्गुणानेतान्, अतीतो भवति प्रभो।
किमाचारः(ख्) कथं(ञ्) चैतांस्, त्रीन्गुणानतिवर्तते॥14.21॥

अर्जुन बोले – हे प्रभो! इन तीनों गुणों से अतीत हुआ मनुष्य किन लक्षणों से (युक्त) होता है? उसके आचरण कैसे होते हैं? और इन तीनों गुणों का अतिक्रमण कैसे किया जा सकता है?

विवेचनः अर्जुन ने पूछा कि हे पुरुषोत्तम! इन तीनों गुणों से गुणातीत पुरुष किन-किन गुणों से युक्त होते हैं, उनका आचरण कैसा होता हैं और किस उपाय से तीनों गुणों का उल्लङ्घन करके गुणातीत बना जा सकता है?

14.22

श्रीभगवानुवाच
प्रकाशं(ञ्) च प्रवृत्तिं(ञ्) च, मोहमेव च पाण्डव।
न द्वेष्टि सम्प्रवृत्तानि, न निवृत्तानि काङ्क्षति॥14.22॥

श्री भगवान बोले – हे पाण्डव! प्रकाश और प्रवृति तथा मोह – (ये सभी) अच्छी तरह से प्रवृत्त हो जायँ तो भी (गुणातीत मनुष्य) इनसे द्वेष नहीं करता और (ये सभी) निवृत्त हो जायँ तो (इनकी) इच्छा नहीं करता।

विवेचनः भगवान अत्यन्त प्रसन्न होकर गुणातीत के लक्षण बताते हुए कहते हैं कि जो पुरुष सतोगुण के कारण प्रकाश को, रजोगुण के कारण प्रवृत्ति को और तमोगुण के कारण मोह को प्राप्त होने पर न तो द्वेष करता है और न ही निवृत्त होने पर उसकी आकाङ्क्षा करता है यह सिद्ध स्थिति की बात है।

पूज्य स्वामी जी कहते हैं कि ऐसा महात्मा जब सिद्ध स्थिति को प्राप्त कर लेता है तो उसके अन्दर ये लक्षण दिखते हैं -

कर्म करने में कोई द्वेष नहीं हो रहा कि मुझे क्यों प्रवृत्ति आ रही है और
निवृत होने पर मुझसे अच्छा काम क्यों छूट गया, इसका दुःख नहीं होता है।

एक बार महावीर स्वामी जिस दिशा में जा रहे थे उसकी विपरीत दिशा में जोर की हवा चली। महावीर स्वामी पलट गए। शिष्यों ने पूछा कि गुरुजी आप तो उधर जा रहे थे। वे बोले कि मुझे तो किधर भी नहीं जाना था, मैं तो चला जा रहा था। हवा ने कहा कि उधर चलो तो मैं उधर ही चल दिया। उनको न इधर जाने का प्रयोजन था, न उधर जाने का। यह सत्त्व गुण के उल्लङ्घन का, गुणातीत योगी का लक्षण है।

14.23

उदासीनवदासीनो, गुणैर्यो न विचाल्यते।
गुणा वर्तन्त इत्येव, योऽवतिष्ठति नेङ्गते॥14.23॥

जो उदासीन की तरह स्थित है (और) (जो) गुणों के द्वारा विचलित नहीं किया जा सकता (तथा) गुण ही (गुणों में) बरत रहे हैं – इस भाव से जो (अपने स्वरूप में ही) स्थित रहता है (और स्वयं कोई भी) चेष्टा नहीं करता।

विवेचनः श्रीभगवान कहते हैं कि जो साक्षी के सदृश्य रहता है, जो गुणों के द्वारा विचलित नहीं होता, जिस के गुण ही गुण को बरत रहे होते हैं, आँखें भोजन देख रही होती हैं, शरीर को नींद आ रही होती है, सो गया। भूख लगी तो खा लिया।

स्वामी रामतीर्थ अपने बारे में जब बात करते थे तो कहते थे अपने राम को नींद लगी है इसे सुला दो। अपने राम को भूख लगी है इसे खिला दो। मैं यह शरीर नहीं हूँ, इस शरीर को भूख लगी है, इस शरीर को नींद आ रही है। प्रत्येक कर्म में उदासीन हो जाता है, कर्ता भाव में नहीं रहता। किसी पक्ष में नहीं रहता- निरपेक्ष होता है, मान-अपमान सब में साक्षी भाव में रहता है।

एक बार नानक देव जी भिक्षा माँगने गए। डाकुओं का गाँव था। उन्होंने भगा दिया। नानक देव जी ने एक मुट्ठी मिट्टी उस गाँव में डाल दी। दूसरे गाँव में पहुँचे। वहाँ सरपञ्च ने बहुत मान किया। वहाँ भी एक मुट्ठी मिट्टी उठाकर डाल दी। बाला, मरदाना ने पूछा कि पहले मिट्टी डाली तो समझ में आ गया कि वे बुरे लोग थे परन्तु इन्होंने तो बहुत अच्छी तरह से सम्मान किया यहाँ मिट्टी क्यों डाली? नानक देव जी ने कहा अपने को मान-अपमान से कोई फर्क नहीं पड़ता। एक मुट्ठी मान करने वाले को और एक मुट्ठी अपमान करने वाले को।

जो समभाव में है, मान-अपमान सब में साक्षी भाव में रहता है वह गुणातीत है, योगी है।

14.24

समदुःखसुखः(स्) स्वस्थः(स्), समलोष्टाश्मकाञ्चनः।
तुल्यप्रियाप्रियो धीरः(स्), तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः॥14.24॥

जो धीर मनुष्य सुख-दुःख में सम (तथा) अपने स्वरूप में स्थित रहता है; जो मिट्टी के ढेले, पत्थर और सोने में सम रहता है, जो प्रिय-अप्रिय में सम रहता है। जो अपनी निन्दा-स्तुति में सम रहता है; जो मान-अपमान में सम रहता है; जो मित्र-शत्रु के पक्ष में सम रहता है (और) जो सम्पूर्ण कर्मों के आरम्भ का त्यागी है, वह मनुष्य गुणातीत कहा जाता है। (14.24-14.25)

विवेचनः जो निरन्तर स्वस्थ है, जिसका मन कभी दुःखी या अस्वस्थ नहीं होता, सुख-दुःख में समान भाव रखता है। लोग उसके सुख में सुखी होते हैं पर वह चुप रहता है और जब दुःख में दुःखी होते हैं वह तब भी चुप रहता है।

कबीर दास जी की गाय चोरी हो गई। गाँव वाले आकर दुःख मनाने लगे। कबीर दास जी बोले कि अब गोबर-उपले उठाने से मुक्ति मिल गई। दो दिन बाद गाय वापस आ गई। गाँव वाले फिर आए और खुशी मनाने लगे। कबीर दास जी ने कहा ठीक है, अब फिर से दूध पी लिया करेंगे। सुख में हर्षित नहीं होना और दुःख में रोना नहीं। यह गुणातीत का लक्षण है।

सोना, मिट्टी, पत्थर जो भी मिले सब में समान भाव है, इसका अर्थ यह है कि उसकी बुद्धि में सोना, मिट्टी, पत्थर, में अन्तर नहीं होता। हमारे शास्त्रों में समदर्शन-समवर्तन का भाव है। समदर्शन करो, समवर्तन कभी न करो। समान भाव रखो पर समान व्यवहार न करो।

कुत्ते, पिता और सन्त में समदर्शन करो, भगवान का दर्शन करो परन्तु कुत्ते, पिता और सन्त को समान प्रकार से भोजन नहीं दिया जा सकता अर्थात् समवर्तन नहीं किया जा सकता।

प्रिय-अप्रिय को जो एक समान मानता है, निन्दा करने वाले को और संस्तुति करने वाले को भी समान मानता है, वह व्यक्ति गुणातीत योगी है।

14.25

मानापमानयोस्तुल्य:(स्), तुल्यो मित्रारिपक्षयोः।
सर्वारम्भपरित्यागी, गुणातीतः(स्) स उच्यते॥14.25॥

विवेचनः जो मान-अपमान में सम रहता है, मित्र-बैरी के पक्ष में सम रहता है, आरम्भ-अन्त में कर्त्तापन के अभिमान से रहित है वह गुणातीत व्यक्ति है।

14.26

मां(ञ्) च योऽव्यभिचारेण, भक्तियोगेन सेवते।
स गुणान्समतीत्यैतान्, ब्रह्मभूयाय कल्पते॥14.26॥

और जो मनुष्य अव्यभिचारी भक्तियोग के द्वारा मेरा सेवन करता है, वह इन गुणों का अतिक्रमण करके ब्रह्म प्राप्ति का पात्र हो जाता है।

विवेचनः जो अव्यभिचारिणी भक्तियोग के द्वारा मुझको निरन्तर भजता है, वह इन तीन गुणों का उल्लङ्घन करके सच्चिदानन्द ब्रह्म को प्राप्त करता है।

अव्यभिचारिणी भक्ति का लोग गलत अर्थ निकलते हैं। वे कहते हैं कि 'मैं' भगवान रामजी की पूजा करता हूँ पर 'मैं' शिव मन्दिर में जाऊँगा तो मेरी भक्ति व्यभिचारिणी हो जाएगी। यह गलत अर्थ है।

अव्यभिचारिणी भक्ति का अर्थ है,, निरन्तर भगवान के चरणों में भक्ति करना और अपने कुल, बुद्धि, बल, सामर्थ्य, जाति, सम्पत्ति में लग्न नहीं रहना तो वह अव्यभिचारिणी भक्तियोग कहलाता है।

उत्तरकाण्ड में भगवान ने बताया कि दस स्थानों पर मनुष्य की ममता होती है -

जननी जनक बंधु सुत दारा। तनु धनु भवन सुहृद परिवारा।।

इन दस स्थानों पर मनुष्य की ममता रहती है किन्तु धन और भवन को भगवान ने अलग रखा है क्योंकि भवन में व्यक्ति का लोभ भी होता है और मोह भी।

यह मेरे पूर्वजों का मकान है, मैं नहीं बेचूँगा।

इन सब से बचने का उपाय बताते हुए भगवान कहते हैं -

सब कै ममता ताग बटोरी। मम पद मनहि बाँध बरि डोरी।।

इन सबकी ममता को एकत्र करके मेरे चरणों में डाल दोगे तो यह अव्यभिचारिणी योग होगा। जब संसार का आश्रय न लेकर भगवान का आश्रय लेते हैं वह अव्यभिचारणी भक्तियोग होता है।

14.27

ब्रह्मणो हि प्रतिष्ठाहम्, अमृतस्याव्ययस्य च।
शाश्वतस्य च धर्मस्य, सुखस्यैकान्तिकस्य च॥14.27॥

क्योंकि ब्रह्म का और अविनाशी अमृत का तथा शाश्वत धर्म का और ऐकान्तिक सुख का आश्रय मैं (ही हूँ)।

विवेचनः उस अविनाशी परम ब्रह्म आत्मा का और शाश्वत धर्म का एकमात्र आश्रय मैं ही हूँ। सभी अभीष्ट का आश्रय मैं ही हूँ।

गीता जी की एक शब्द में व्याख्या करनी हो तो **शरणागति** शब्द से उसकी व्याख्या की जाती है।

एक वाक्य में व्याख्या करनी हो तो गीताजी का सन्देश है **मामेकं शरण व्रज।**

भगवान कहते हैं कि सभी अभीष्ट का आश्रय मैं ही हूँ, परमब्रह्म अविनाशी अमृत का, अखण्ड का, एक रसानन्द का आश्रय मैं ही हूँ इसलिए मेरा ही आश्रय लेना चाहिए। अन्य किसी बात से अन्तर नहीं पड़ता। सब लोग परमात्मा का अलग-अलग रूप में दर्शन करते हैं। परमब्रह्म अविनाशी का, अमृत का, अखण्ड का, एक रसानन्द का आश्रय मैं ही हूँ इसलिए मेरा ही आश्रय लेना चाहिए।

श्रीकृष्णार्पणमस्तु के साथ विवेचन सत्र का समापन हुआ और प्रश्नोत्तर काल आरम्भ हुआ।

प्रश्नोत्तर

प्रश्नकर्ता:-अरुन्धती दीदी
प्रश्न:- तुल्यनिन्दास्तुतिर्मौनी, सम-दु:ख, मान-अपमान, ये शब्द भगवान ने दो-तीन अध्याय में पुनरावृत्ति करके समझाने का प्रयास किया है। ऐसा क्यों?
उत्तर:-भगवान ने हर अध्याय में इनको अलग-अलग दृष्टिकोण से कहा है। यहाँ पर गुणातीत के लिए कहा है। बाहरवें अध्याय में भक्ति के लिए कहा है। अगर भक्ति मार्ग से जाओगे तब यही कार्य करना है। ज्ञान मार्ग से जाओगे तब भी वही कार्य करना है। ऐसी कुछ बातें भगवान ने सामान्य सबके लिए कहीं हैं। कई बार भक्ति मार्गीय वालों को लगता है यह सब बातें ज्ञानमार्गी के लिए है, यह मेरे लिए नहीं है। मैं तो भगवान की भक्ति करता हूँ बाकी मान-अपमान वाली बातें ज्ञान मार्ग वालों के लिए है। भगवान कहते हैं कि ऐसा नहीं है। यह भक्ति करने के लिए भी उतनी ही आवश्यक हैं इसलिए भगवान ने उसको अलग-अलग दृष्टिकोण से कहा है। यह बात सत्य है कि इसका एक अलग मार्ग है लेकिन कॉमन सिम्टम एक ही है।

प्रश्नकर्ता:-अतुल भईया जी
प्रश्न:-' **सर्वारम्भपरित्यागी** ' यह शब्द बाहरवें अध्याय और चौदहवें अध्याय दोनों में आया है। इसका अर्थ यह है कि हम सब सारे कार्य करना छोड़ दे पर ऐसा हो नहीं सकता।
उत्तर:-भगवान कर्म छोड़ने ही नहीं देते। 'सर्वारम्भपरित्यागी ' यह अन्तिम बात है। यह पीएचडी लेवल की बात है। अभी हम प्रथम और द्वितीय कक्षा में ही है तथा जहाँ पर जाकर योगी को नए सङ्कल्प नहीं करने होते। मैं अपनी तरफ से प्रवृत्ति का आरम्भ नहीं करूँगा। यह जो कर्त्तव्य है, वह तो करूँगा, अन्तिम स्थिति यही है। यह आरम्भिक लोगों के लिए नहीं है। उसको अब नए प्रपञ्चों से छुटकारा पाना चाहिए। जैसे मैं अपनी ओर से भण्डारा चलाऊँ, मैं अपनी ओर से गीता की कक्षा चलाऊँ, उसको ऐसे प्रपञ्चों से बचना चाहिए। अगर कहीं भण्डारा हो रहा है तो कार्य कर लेगा पर अपने नाम से भण्डारा नहीं करेगा। यह कर्त्तव्य कर्मों का त्याग किसी स्थिति में त्याज्य नहीं है।

प्रश्नकर्ता:- आशीष बजरंगी भईया जी
प्रश्न:- आजकल विज्ञान की नई तकनीक से गर्भ में ही बच्चों की स्वास्थ्य की जानकारी मिल जाती है अर्थात पता चल जाता है कि बच्चा किसी गम्भीर बीमारी से ग्रस्त तो नहीं है। अपङ्ग तो नहीं है अगर ऐसा होता है तो माँ-बाप उसका गर्भपात करा लेते हैं तब ऐसे में माँ-बाप पाप के भागीदार बनते है या नहीं?

उत्तर:- गर्भपात किसी भी कारण से कराया जाए तो पाप के भागीदार बनते हैं। पहले जिनके घर में गर्भपात हो जाता था उसके घर से भिक्षा नहीं लेते थे। गर्भपात कराने वाले कहते हैं कि बच्चा बीमारी लेकर पैदा होता तो दु:खी रहता पर इसका अधिकार भगवान ने अपने पास रखा है कि हम क्या पाते हैं और बच्चा क्या पाता। हमें इस बात की शिक्षा मिलती है कि अगर हम किसी की हत्या करेंगे तो उसकी सजा मिलेगी

प्रश्नकर्ता:- राजीव दीदी
प्रश्न:- जब हम भगवान को दूध से, जल से स्नान कराते हैं तो उसका जल ताँबे के पात्र में डाल कर हथेली में पञ्चामृत की तरह लेना चाहिए। दूसरी जगह कहते हैं कि ताँबे के पात्र में दूध नहीं डालना चाहिए वह जहर माना जाता है क्या करें क्या न करें कृपा करके समझाएंँ।
उत्तर:- तांँबे के पात्र में लम्बे समय तक दूध डालकर रखने पर वह जहर बनता है। उसको तुरन्त ग्रहण कर लिया जाए तो वह जहर नहीं बनता तथा ताँबे के पात्र में लेना ही अनिवार्य नहीं है किसी भी धातु के पात्र में डाल कर ले सकते हैं।

प्रश्नकर्ता:- आकांक्षा दीदी जी
प्रश्न:- रजोगुण वाले व्यक्ति मनुष्य योनि में आते हैं पर कुछ माता-पिता बहुत अच्छे होते हैं और कुछ माता-पिता ऐसे होते हैं जो अपने बच्चों का बिल्कुल भी ध्यान नहीं रखते। माता-पिता का चयन कैसे होता है और ऐसा क्यों होता है?
उत्तर:- हम जीवन भर कर्म करते हैं। उन कर्मों के लेखा-जोखा के अनुसार तय होता है कि मुझे कुरूप या सुन्दर रूप में जन्म मिलेगा, धनवान या गरीब परिवार, संस्कारित परिवार या वो परिवार जहाँ पर सब शराब का सेवन करते हैं, ऐसा परिवार मिलेगा। ये सब बातें हमारे कर्म से तय होती हैं।

प्रश्नकर्ता:- आकांक्षा दीदी जी
प्रश्न:- भारत भूमि में मनुष्य के रूप में जन्म लेना ही बहुत मुश्किल है फिर भारत के निवासी देश विरोधी कैसे हो जाते हैं?
उत्तर:- दोनों बातें अलग-अलग हैं। भारत भूमि में जन्म हुआ यह एक बात है, भारत भूमि में किस परिवार में जन्म हुआ यह दूसरी बात है क्योंकि भारत में कुछ परिवार बुरे होते हैं। यह बात हर काल में सत्य है कि बुरी प्रवृत्ति और राक्षस प्रवृत्ति के मनुष्य हर काल में मिलते हैं। भारत में सत्त्व गुण ज्यादा है पर तमोगुण भी है। सारे स्थान में सिर्फ रजोगुण हो या सत्त्व गुण हो ऐसा नहीं हैं।

प्रश्नकर्ता:- शशि दीदी जी
प्रश्न:- '**न कर्मणा रम्भान**' अर्थात कर्म आरम्भ किये बिना ही निष्कर्म नहीं हुआ जाता पर दूसरी तरफ हम कहते हैं कि सङ्कल्प और विकल्प से रहित होना अर्थात कुछ सङ्कल्प न करना। परन्तु कुछ न कुछ सङ्कल्प करके ही सुबह जगा जाता है कि आज मैं यह कार्य करूँगा।
उत्तर:- सङ्कल्प-विकल्प में कर्त्तापन का भाव चल गया है।' मै' यह भाव चला गया। मेरे कर्त्तव्य रूप में भगवान ने मुझे कार्य दिया है इसलिए मैं कर रहा हूँ। 'मैं उसको कर रहा हूँ ' जब यह कर्त्तापन का अभिमान है और फल की इच्छा है तो यह कर्मों से बाँधता है। कर्त्तापन का अभिमान और फल इच्छा चली गई और फिर भी जो कर्म करते हैं तो वह स्वाभाविक कर्म है इसलिए सङ्कल्प की आपत्ति नहीं है पर उस सङ्कल्प में कर्त्तापन के अभिमान की आपत्ति है।

प्रश्नकर्ता:- ललिता दीदी
प्रश्न:- रामायण पढ़ने के लिए कौन सी लेनी चाहिए?
उत्तर:- रामायण वाल्मीकि की पढ़नी चाहिए या रामचरितमानस पढ़नी चाहिए।

प्रश्नकर्ता :- हरिहर भईया जी
प्रश्न:- इस अध्याय के बाईसवें श्लोक में धर्म प्रवृत्ति और धर्म मोह का अर्थ बताएँ।
उत्तर:- भगवान कहते हैं कि सतोगुणी की दृष्टि में स्पष्टता आ जाती है अर्थात प्रकाश आ जाता है, उसको कोई सन्देह नहीं रहता। What to do what not to do, do and don't. उसको इस बात के लिए पूरी तरह से स्पष्टता होती है। पर हम अपने मन की वासनाओं में ही फँसकर अपने आप को ही मूर्ख बनाते हैं। अपने आप को ही गलत तर्क देते हैं और उसे ही सही मानते हैं और फिर दूसरे को भी वही मनवाना चाहते हैं। दूसरा माने या न माने। अपने गलत कार्य को भी सही मानते हैं और

यह सब रजो गुण के कारण ही होता है। अगर सत्त्व गुण होगा तो हम अपनी गलत बात को कभी सही नहीं कहेंगे। सत्त्वगुण के कारण गलत बात कभी करेंगे नहीं और अगर कभी हो भी गई तो गलत बात को गलत ही कहेंगे, उसको सही कहने का प्रयास कभी नहीं करेंगे। रजोगुण की प्रवृत्ति में व्यक्ति हमेशा कार्यरत रहता है। तमोगुण वाला हमेशा पड़ा रहना ही चाहता है, हमेशा आराम करना ही चाहता है। सत्त्वगुण वाला कर्त्तव्य कर्म को करता रहता है और तमोगुण वाला कर्त्तव्य कर्म को भी नहीं करना चाहता।

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासु उपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां(म्) योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे गुणत्रयविभागयोगो नाम चतुर्दशोऽध्याय:।।

इस प्रकार ॐ तत् सत् - इन भगवन्नामों के उच्चारणपूर्वक ब्रह्मविद्या और योगशास्त्रमय श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप श्रीकृष्णार्जुनसंवाद में 'गुणत्रयविभागयोग' नामक चौदहवाँ अध्याय पूर्ण हुआ।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!
हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !
संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!
आइये हम सब गीता परिवार के इस ध्येय से जुड़ जायें, और अपने इष्ट-मित्र -परिचितों को गीता कक्षा का उपहार दें।

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||
||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||